Q. 1. संस्कृत रूपक (नाटक) के उद्भव (उत्पत्ति) के सम्बन्ध में प्रचलित मतों की समीक्षा करें। इसके विकास पर प्रकाश डालें।

Ans— प्राचीन आचार्यों ने काव्य को 2 भागों में बाँटा है- 1. श्रव्यकाव्य एवं 2. दृश्यकाव्य। जो काव्य केवल सुना जा सके वह 'श्रव्यकाव्य' है जैसे- गद्य, पद्य एवं चम्पू इसके 3 भेद हैं। देखे सुने जाने (दोनों) की क्षमता वाले काव्य "दृश्य काव्य" है जैसे- रूपक (10 भेद) एवं उपरूपक (18 भेद) - इसके 2 भेद हैं। यद्यपि प्राचीन संस्कृत नाट्य-शास्त्र में 'रूपक' शब्द ही अधिक प्रयुक्त हुआ है। रूपक का एक भेद 'नाटक' है। अर्वाचीन संस्कृत साहित्य के इतिहास ग्रन्थों में नाटक शब्द ही अधिक दिखाई पड़ता है।

संस्कृत साहित्य में नाटकों की अपनी एक विशिष्ट परम्परा विद्यमान है पर संस्कृत साहित्य में नाटकों की उत्पत्ति कब और कैसे हुई यह विवादग्रस्त प्रश्न है। यद्यपि विद्वानों ने इस विषय की मीमांसा बड़ी छानबीन के साथ की है पर उनमें किसी का मत विश्वसनीय नहीं माना जा सकता क्योंकि नाटक समाज के लिए दर्पण के समान होता है। समाज जिस प्रकार नवीन विचारधाराओं से परिवर्तित होते रहता है उसी प्रकार नाटक भी।

संस्कृत नाट्य-साहित्य के उद्भव के सम्बन्ध में विद्वानों में अत्यधिक मतभेद हैं। उनके विचारों को 3 भागों में बाँट का अध्ययन किया जा सकता है—

1 परम्परागतवाद 2. धार्मिक भावनावाद और 3. लौकिक लीलावाद।

1. परम्परागतवाद— इसके अन्तर्गत द्युलोकवाद या दैविक उत्पत्ति आता है। भरतमुनि ने अपने नाट्यशास्त्र के प्रथम अध्याय में कहा गया है कि- "सांसारिक मनुष्यों को अत्यन्त खिन्न देखकर इन्द्रादि देवताओं ने ब्रह्मा के पास जाकर ऐसे वेद-निर्माण की प्रार्थना की, जिससे वेद के अनधिकारी स्त्री-शूद्रादि सभी लोगों का मनोरंजन हो। यह सुनकर ब्रह्मा ने चारों वेदों का ध्यान कर ऋग्वेद से पाठ्य, सामवेद से गान, यजुर्वेद से अभिनय एवं अथर्ववेद से 'रस' लेकर पंचमवेद (नाट्यवेद) की रचना की और इन्द्र से कुशल प्रगल्भ देवताओं में इसका प्रसार करने को कहा। इन्द्र ने कहा कि देवतालोग नाट्यकर्म में कुशल नहीं हैं। वेदों के मर्म जानने वाले मुनिजन ग्रहण एवं प्रयोग में असमर्थ हैं। अतः ब्रह्मा के कथनानुसार भरतमुनि ने अपने पुत्रों को इसकी शिक्षा दी। यह प्रयोग भारती, सात्वती, आरभटी वृत्ति में शुरू हुआ। बाद में कौशिकी वृत्ति जोड़ी गई जिसका प्रदर्शन स्त्री पात्रों के बिना नहीं हो सकता था। अतः उन्होंने 'अप्सराओं की कल्पना की। भरतमुनि इन सब वस्तुओं से सुसज्जित होकर ब्रह्मा के पास गए एवं आगे का प्रयोग पूछा। ब्रह्मा के कथनानुसार इन्द्र के 'ध्वजोत्सव' में इस नाट्यवेद का सर्वप्रथम प्रयोग किया गया। इसमें देवों का उत्कर्ष एवं दैत्यों का अपकर्ष देखकर दैत्य उत्पात

Scanned with CamScanner

करने लगे। इन्द्र के आदेशानुसार विश्वकर्मा ने नाट्यगृह बनाया। ब्रह्मा ने कहा कि इसमें धर्म, क्रीड़ा, हास्य और युद्ध सभी विषय हों पहला अभिनीत नाटक त्रिपुरदाह नामक डिम तथा समुद्र मन्थन नामक समवकार थे।" अतः स्पष्ट होता है कि नाटक के उद्भव-सम्बन्ध में मूलतः ब्रह्मा का हाथ मानते हैं। कुछ लोग इसे किम्वदंती मानते हैं लेकिन इससे निम्न बातें प्रकाशित होती हैं—

(क) नाट्यवेद की रचना में चारों वेदों का सहयोग है। (ख) प्राचीनतम रूपक धार्मिक थे और वे धार्मिक पर्वों पर खेले गये थे। (ग) इनमें नर-नारी दोनों ने भाग लिये।

2. धार्मिक भावनावाद— इसके अन्तर्गत निम्न वाद प्रचलित हैं—

(क) मृतक पूजावाद— इसके प्रवर्तक डॉ रिजले हैं। इनके अनुसार समस्त संसार में नाटकों का उद्भव मृतात्माओं के प्रति प्रकट की गई लोगों की श्रद्धा से हुआ अर्थात् मृतक पूजा के कारण धीरे-2 नृत्य, गान व अभिनय होने लगे एवं नाटकों का प्रणयन होने लगा रामलीला एवं कृष्णलीला में भी यही भावना मौजूद रही है; क्योंकि अपने पूर्वजों के प्रति श्रद्धा व्यक्त करने के लिये ही उक्त धार्मिक लीलाएँ होती हैं। परन्तु डॉ रिजले का मत अब यूरोपीय विचारक ही नहीं मानते। उनका कहना है कि हम राम व कृष्ण की पूजा इसलिये करते हैं कि उनके चरित्र के स्मरण व श्रवण कर हमें सुख, शांति व मुक्ति प्राप्त हो।

(ख) पर्ववाद या May-Pole वाद— इसके अनुसार नाटकों की उत्पत्ति May-Pole नृत्य से हुई मानी जाती है। पाश्चात्य देशों में मई माह में अनेक उत्सव होते हैं जिसमें लोग नाचते-कूदते एवं आनन्द मनाते हैं। एक लम्बा बाँस गाड़कर उसके नीचे एकत्र सभी स्त्री-पुरुष नृत्य करते हैं। भारत में भी इन्द्रध्वज इसी तरह मनाया गया था। अतः अनुमान होता है कि नाटकों की उत्पत्ति वसंत में मनाए जाने वाले त्योहारों या पर्वों के आधार पर हुई होगी। यह मत भी मान्य नहीं है क्योंकि May-Pole एवं इन्द्रध्वज की समानता नहीं हो सकती। May-Pole वसंत में होता है जबकि इन्द्रध्वज पर्व भारत में वर्षा के अन्त में। इन्द्रध्वज पर्व इन्द्र की वृत्र (मेघ) पर विजय का सूचक है।

(ख) कृष्णोपासनावाद — इसके अनुसार नाटकों के उद्भव का सम्बन्ध कृष्णोपासना के उदय एवं प्रसार से है। कृष्णोपासना के कई अंग जैसे- रथ यात्राएँ, नृत्य, वाद्य व गीत और लीलाएँ आदि कई उपकरण नाट्योत्पत्ति में सहायक हैं। संस्कृत नाट्य-साहित्य का विकास कृष्णोपासना के घर शूरसेन देश में ही हुआ और नाटकों में शौरसेनी प्राकृत का प्राबल्य इसी देश की देन है। कई त्रुटियों के कारण इस वाद की पूर्ण उपेक्षा की गई है।

3. लौकिक लीलावाद— इसके अन्तर्गत निम्नांकित वाद प्रचलित हैं—

(क) लोकप्रिय स्वांगवाद — प्रो॰ हिलब्रैंड एवं स्टेन कोनो के अनुसार प्राचीन भारत में लोकप्रिय स्वांगों का प्रसार था और बाद में इन स्वांगों में रामायण और महाभारत की कथाओं को मिलाकर रूपक का रूप दे दिया गया, परन्तु डॉ॰ कीथ इस मत के प्रबल

Scanned with CamScanner

विरोधी हैं। उनका कहना है कि रूपक के प्रसार से पूर्व स्वांगों के प्रचलित होने के प्रबल उचित प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं।

(ख) (ख) कठपुतलिका नृत्यवाद — डॉ० पिशले के अनुसार नाटक की उत्पत्ति कठपुतलियों के नृत्य (पपेट शो) से मानते हैं। उनका कहना है कि नृत्य की उत्पत्ति भारतवर्ष में ही हुई और अन्य देशों में इसका प्रचार भारत से ही हुआ। नाटकों में प्रयुक्त सूत्रधार-(डोरे को पकड़ने वाला) एवं स्थापक-(किसी वस्तु को लाकर रखने वाला) आदि शब्दों का मूलार्थ इस मत का पोषण करता है। यह मत भी निर्भ्रान्त नहीं है। प्रो० हिलब्रैंड का कहना है कि कठपुतलिका नृत्य से नाटक की उत्पत्ति नहीं हुई बल्कि नाटक इससे पुराना है क्योंकि कठपुतलिका नृत्य का आधार नाटक ही था।

(ग) छायानाटकवाद — इस वाद के समर्थक प्रो० लूडर्स Luders का कहना है कि संस्कृत नाटकों का विकास छाया द्वारा खेल दिखाने की प्रथा से हुआ है और रूपक शब्द जितना अन्वर्थ इस सिद्धान्तानुसार सिद्ध होता है उतना किसी अन्य से नहीं। परन्तु विचारक इसे भी त्रुटिपूर्ण मानते हैं। डॉ० कीथ का कहना है कि यह वाद महाभाष्य के एक प्रसङ्ग के अशुद्ध अर्थ पर आधृत है और रूपकों की सत्ता छायावाद नाटक के जन्म से पूर्व स्वीकार करनी होगी।

(घ) सम्वाद-सूक्तवाद — ऋग्वेद में 15 से अधिक सम्वाद सूक्त (यम-यमी, पुरूरवा-उर्वशी आदि) ऐसे हैं जिनमें धार्मिक भावनाओं के अलावे लोक-व्यवहार से सम्बन्धित संवाद हैं। सर्वप्रथम 1866 में प्रो० मैक्समूलर ने इन सम्वाद सूक्तों को ही नाटक की उत्पत्ति का प्रमुख स्रोत बताया। डॉ० लेवी Levi ने मैक्समूलर के मत का समर्थन करते हुए कहा है कि इन सूक्तों में धार्मिक भावना से पूर्ण नाटकों में दृश्यों के दर्शन होते हैं। वॉन श्रोडर के अनुसार इन सूक्तों से Mystery-Play की सूचना मिलती है। डॉ० हर्टल के अनुसार वैदिक नाटक के विकास का मूल रूप सुपर्णाध्याय के अन्दर दृष्टिगोचर होता है। यह मत भी पूर्ण प्रमाणिक नहीं है।

(ङ) वैदिकानुष्ठानवाद — ऋग्वेद के मरुत सूक्त की व्याख्या करते हुए जर्मन विद्वान प्रो० मैक्समूलर ने यह प्रतिपादित किया कि संस्कृत नाटक की उत्पत्ति वैदिक काण्ड से हुई और अब तो अधिकांश विचारक यह मानते हैं कि रूपक के प्रायः समस्त उपादान वैदिक अनुष्ठानों में विद्यमान हैं एवं प्रो० हंसराज अग्रवाल ने इस सम्बन्ध में निम्नांकित प्रमाण प्रस्तुत किए हैं—

(i) नृत्य, संगीत एवं सम्वाद- ये रूपक के आवश्यक घटक हैं। नृत्य का उल्लेख ऋग्वेद में है एवं गीत सामवेद में है।

(ii) वैदिक अनुष्ठान छोटी-2 क्रियाओं के सूत्रों से गुम्फित जाल थे जिनमें कुछ नाटकीय तत्त्व भी विद्यमान थे। (iii) महाव्रत अनुष्ठान वस्तुतः एक प्रकार से नाटक था जिसमें कुमारियाँ अग्नि के चतुर्दिक नाचती थी। शूद्र और वैश्य का प्रकाशार्थ कलह करना वस्तुतः नाटकीय अभिनय है।

Scanned with CamScanner

रूपक का यूनानी उद्भव — कतिपय पाश्चात्य विद्वान संस्कृत नाटकों की उत्पत्ति यूनानी रूपकों के फलस्वरूप मानते हैं। डॉ० वेबर ने संस्कृत नाटकों पर ग्रीक प्रभाव पड़ने की बात का उल्लेख किया है। इसके बाद विंटिश Windish ने पुनः भारतीय एवं यूनानी नाटकों में सादृश्य दिखाते हुए संस्कृत नाटकों में प्रयुक्त यवनिका या जवनिका की उत्पत्ति यूनानी पद 'यवन' से माना है एवं यूनानी नाटकों को भारतीय नाटकों का मूल स्रोत सिद्ध करने का प्रयास किया है लेकिन ऐतिहासिक कसौटी पर यह खरा नहीं उतरता है।

उक्त सभी मतों का अनुशीलन करने के बाद हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि संस्कृत नाटकों के उद्भव के सम्बन्ध में किसी एक वाद-विशेष या मत को ही प्रमुखता प्रदान करना उचित न होगा क्योंकि उनके विकास में तो शनैः-2 सभी तत्व सहायक रहे हैं। हमें वैदिक सम्वाद सूक्तों में नाटकों के उद्भव की प्रारंभिक झलक अवश्य मिलती है पर यह सत्य है कि इनका विकास धीरे-2 अनेक शतकों में हो गया होगा। प्रोफेसर जगद्वाल के शब्दों में — "यह रूपक का विकास मानो एक सजीव शरीर था जिसके रूप में कई बार परिवर्तन हुए, जिसको जो मिला उसी को हड़प लिया और फिर भी अपना स्वरूप अक्षुण्ण कर रखा।"

संस्कृत नाटकों का विकास — संस्कृत नाट्य साहित्य का विकास क्रमशः वैदिक काल से ही हुआ। इस युग में वे सभी उपादान (नृत्य, संगीत या संवाद) प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं जो नाटक के विकास के लिए अपेक्षित हैं। वाल्मीकि रामायण में नट, नर्तक, नाटक, नृत्य का उल्लेख अनेक स्थलों पर मिलता है। मामा के घर दुःस्वप्न देखने से चिन्तित भरत को गीत, नृत्य और आनन्द-प्रदायक नाटकों से ही प्रसन्न करने की चेष्टा की गई थी। महाभारत में भी नाटक, गायक तथा सूत्रधार आदि शब्द आए हैं। वज्रनाभ के वध और प्रद्युम्न के विवाह के प्रकरण में रामायण नाटक और कौवेररम्भाभिसार नामक नाटकों के प्रदर्शन का उल्लेख मिलता है। श्रीमद्भागवत पुराण में अभिनेताओं का उल्लेख है। मार्कण्डेय पुराण में हम राजा शुक्रजीत के पुत्र ऋतुध्वज को नाटकाभिनय में अभिरुचि लेते पाते हैं। बौद्ध साहित्य के दीर्घ निकाय में विभिन्न मनोरंजन दृश्यों सम्बन्धी शब्दों की सूची मिलती है। महावीर के 200 वर्ष बाद भद्रबाहु द्वारा रचित कल्पसूत्र में नाटक देखने से जैन साधुओं को विरत होने का उपदेश दिया गया है। इसी प्रकार कौटिल्य के अर्थशास्त्र, वात्स्यायन के कामसूत्र, पाणिनी के अष्टाध्यायी, पतंजली के महाभाष्य (कंसवध एवं बलिवध) में नाटक को रंगमंच पर प्रदर्शित करने का उल्लेख मिलता है। इस विवरण से यह स्पष्ट होता है कि नाटक की उत्पत्ति भारत में ही हुई और वह वैदिक युग से क्रमशः विकसित होता हुआ अपने उन्नत स्वरूप को प्राप्त कर सका। अर्वाचीन विद्वानों के अनुसार भास ही संस्कृत साहित्य का प्रथम नाटककार है। इनके 13 नाटक हैं — प्रतिमा एवं अभिषेक, बालचरित, पंचरात्र, मध्यम व्यायोग, दूतवाक्य, दूतघटोत्कच, कर्णभार, ऊरुभंग, स्वप्नवासवदत्तम, प्रतिज्ञायौगन्धरायण, अविमारक एवं दरिद्रचारुदत्तम।

Scanned with CamScanner